

अनुक्रम

अध्याय :	एक	पृष्ठ क्र.
1.1	योग शिक्षकों के लिए सामान्य निर्देश	1
1.2	योग को विद्यालय में प्रभावी बनाने हेतु कुछ सुझाव	3
अध्याय :	दो	
2.1	गुरुवंदना	5
2.2	सरस्वती वंदना	5
2.3	प्रार्थना	5
2.4	गायत्रीमंत्र	7
2.5	शान्तिपाठ	7
2.6	योग क्या है?	9
2.7	योगासन हेतु सावधानियाँ	10
अध्याय :	तीन	
3.1	अष्टांग योग	11
3.2	शरीर रचना	14
3.3	मेरुदंड मांसपेशियाँ और गतियाँ	15
3.4	रक्त संस्थान, फुफफुस और हृदय, पाचन तंत्र	16
अध्याय :	चार	
4.1	आसन का तात्पर्य और उनके प्रकार	21
4.2	स्वस्तिकासन	22
4.3	भद्रासन	22
4.4	गोमुखासन	23
4.5	गोरक्षासन	23
4.6	अर्ध मत्स्येन्द्रासन	24
4.7	योगमुद्रा	25
4.8	उदराकर्षण	25

4.9 आकर्णधनुरासन	26
4.9 विपरीतकरणी	26
4.10 सर्वांगासन	27
4.11 हलासन	28
4.12 आवश्यक निर्देश	28

अध्याय : पाँच

5.1 सूर्य नमस्कार	29
5.2 प्राणायाम	33
1. नाडी शोधन प्राणायाम	33
2. अनुलोम-विलोम प्राणायाम	33
3. शीतली प्राणायाम	34
4. शीतकारी प्राणायाम	35
5. भस्त्रिका प्राणायाम	35
6. कपालभाति प्राणायाम	36
7. भ्रामरी प्राणायाम	36

अध्याय : छः

6.1 मुद्राएँ	38
6.2 बंध	39
6.3 दृष्टि	41
6.4 षट्कर्म	41

अध्याय : सात

7.1 स्थूल व्यायाम	44
7.2 सूक्ष्म व्यायाम	47
7.2 प्रस्तावित मूल्य शिक्षा पाठ्यक्रम	74
7.3 मानवीय मूल्यों के घटक	76

उच्च एवं उच्चतर माध्यमिक विभाग (कक्षा 9 से 12)

- निर्देश :-
1. पूर्व की कक्षाओं के आसनों का अभ्यास अवश्यकतानुसार कराएँ।
 2. सुखासन, पद्मासन, वज्रासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, सूर्यनमस्कार और शवासन का अभ्यास प्रत्येक कक्षा के छात्र- छात्राओं को कराएँ

आसन

1. गोमुखासन
2. गोरक्षासन
3. अर्ध मत्स्येन्द्रासन
4. स्वस्तिकासन
5. सिद्धासन
6. वृश्चिकासन
7. भद्रासन
8. बकासन
9. उदराकर्षण आसन
10. आकर्ण धनुरासन
11. गर्भासन
12. कुक्कुटासन
13. विपरीतकरणी
14. योगमुद्रा

निर्देश – 1 पूर्व कक्षाओं में कराये प्राणायाम, मुद्राएँ, दृष्टि और षट्कर्म का अभ्यास उच्चतर माध्यमिक विभाग के छात्र-छात्राओं को भी कराएँ।

2. प्राणायाम कराते समय नीचे लिखे तीन बंध का अभ्यास कराया जाना आवश्यक है।

- बंध**
1. मूल बंध
 2. उड्डियान बंध
 3. जालन्धर बंध

स्थूल व्यायाम : क्रमांक 1 से 5 तक।

सूक्ष्म व्यायाम : क्रमांक 1 से 48 तक।

अध्याय : एक

1.1 योग शिक्षकों के लिए सामान्य निर्देश

1. योग शिक्षा का कार्यभार उन्हीं अध्यापकों को दिया जाना चाहिए जिन्होंने इस बारे में स्वाध्याय और अभ्यास किया हो और इस कारण इस विषय में कुछ निष्ठा बनी हो अर्थात् योग का शिक्षक इस विषय में अच्छी जानकारी और अनुभव रखता है।
2. योग शिक्षकों को शिक्षा पाठ्यक्रम की पुस्तिका, इसकी भूमिका तथा उनमें निहित किसी एक योग्य पद्धति को अच्छी तरह पढ़ना चाहिए व उसी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए। ऐसी पुस्तकें उनके स्वाध्याय हेतु विद्यालय में रखी जाएँ तथा उन पुस्तकों में योगासन सचित्र होने चाहिए।
3. जो भी आसन या क्रिया सिखानी हो, उसकी विधि और लाभ विद्यार्थियों को पहले समझा देने चाहिए।
4. योगासन या क्रिया का कार्यक्रम कराते समय कब, कौन से आसन या क्रिया कैसे कराई जाए, यह ध्यान में रखना चाहिए।
5. योग करते समय विद्यार्थी अपना ध्यान कहाँ एकाग्र करें यह अवश्य बताना चाहिए।
6. शरीर के भाग पर जोर पड़ने वाले आसन करने के बाद उसके विरुद्ध भाग पर जोर पड़ने वाले आसन अवश्य कराने चाहिए जैसे – हलासन के बाद चक्रासन।
7. किस प्रकार की वेश-भूषा में योग सुविधापूर्वक हो सकता है – यह शिक्षक स्वयं भी ध्यान में रखें और विद्यार्थियों को भी बताएँ।
8. योगासन खाली पेट करवाना चाहिए अर्थात् खाना के तीन-चार घंटे बाद ही योग कराया जा सकता है। बालक से पूछें कि उसने कब, कैसे भोजन किया या प्रातः शौच हुआ या नहीं, यह जानकार ही योगासन कराना चाहिए वरना हानि हो सकती।
9. सात्विक आहार और स्वास्थ्य का सम्बन्ध जानें।
10. योगासन करते समय यदि किसी बालक से गलती हो या उससे उससे योग न होता हो तो उसे डाँटना नहीं चाहिए।
11. बालकों को योग क्रिया कराते समय शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि बालक उस

आसन को सरलता से कर रहा है, कहीं जोर जबरदस्ती तो नहीं कर रहा अथवा किसी विद्यार्थी को परेशानी तो नहीं हो रही है।

12. प्रत्येक आसन की अन्तिम सही स्थिति तक पहुँचने के लिए अनेक सरल-चरणों का ज्ञान होना चाहिए। उसके लिए स्वयं भी आसनों की रचना सोचते व करते रहना चाहिए।
13. प्रत्येक आसन के पश्चात् शवासन द्वारा अंग शिथिल कराकर ही दूसरा आसन कराएँ।
14. योग सिखाते समय छात्रों की आयु, शक्ति व बीमारी आदि का ठीक विचार करके धीरे- धीरे अभ्यास कराना चाहिए।
15. किन आसनों व क्रियाओं के करने से किन रोगों का नाश हो जाता है – यह शिक्षक को अवश्य मालूम होना चाहिए।
16. शिक्षक कक्षा में कहानी द्वारा विषय स्पष्ट करें।
17. योग शिक्षक आपस में अवश्य परामर्श करें, परन्तु विद्यार्थियों के सामने नहीं।
18. अधिक आसन व क्रियाएँ करने के स्थान पर कम आसन व क्रियाएँ अधिक समय तक करना उपयोगी रहता है।
19. योग शिक्षक व्यावहारिक जीवन में योग विषय का ज्ञाता रहे। इस दृष्टि से उसका स्वयं का निरन्तर एवं प्रत्यक्ष अनुभव के व्यावहारिक रूप के लिए चल रहे योग केन्द्र से भी जीवन्त सम्पर्क रखें तथा अपने लिए भी 'सिखाने की पद्धति' की जगह 'सीखने की पद्धति' को जीवन में उतारे।
20. बालकों के घरेलू वातावरण को जानने के लिए शिक्षक-अभिभावक सम्मेलन आदि आयोजित करने चाहिए तथा अभिभावकों को भी योग का महत्व बताना चाहिए।
21. योग शिक्षक को योग कराते समय स्थान का भी उचित चुनाव करना चाहिए जैसे खुला स्थान बड़ा हाल। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि –
 - (अ) योग समतल स्थान पर करें।
 - (ब) स्थान छायादार हो तथा वहाँ पर किसी प्रकार का शोर न हो।
 - (स) योग आसन मोटी दरी पर करना चाहिए।
22. योग बहुत बड़े समूह में न करवा कर छोटे समूह में करवाना चाहिए।

23. योग में केवल आसन ही नहीं, आसन के साथ साधारण प्राणायाम तथा योग प्रक्रियाओं के प्रति रुचि और निष्ठा विकसित होनी चाहिए।
24. धीरे-धीरे शिक्षक ऐसी आसन श्रृंखला व योग श्रृंखला बता सके जिसे बालक नियमित रूप से अपने घर पर भी ठीक से करना प्रारम्भ कर सकें।
25. विद्यालय समय से पूर्व या बाद में छात्रों का योग वर्ग लगाया जा सकता है।

1.2 योग को विद्यालय में प्रभावी बनाने के सम्बन्ध में कुछ सुझाव

1. योग विषय में रुचि रखने वाले शिक्षकों को ही इस दिशा में क्रमशः आगे बढ़ाए जाएँ। क्रमशः सबकी रुचि बढ़ानी है, यह उद्देश्य हो।
2. प्रार्थना सभा बड़ी प्रभावी बनाई जाए। ॐ जप, मौन, ध्यान का भी प्रार्थना सभा में समावेश हो। योग सम्बन्धी, विशेषकर यम नियम की व्याख्या करने वाली कहानियाँ प्रार्थना सभा में सुनाई जाएँ।
3. योग कक्ष या ध्यान-कक्ष की व्यवस्था विद्यालय स्तर पर की जाए।
4. आवासी विद्यालयों में इसे नित्य प्रति कार्यक्रम में रखा जाए।
5. योग प्रशिक्षण की प्रक्रिया अनवरत बनाये रखने की आवश्यकता है।
6. योग की प्रक्रिया की प्रत्यक्ष जानकारी के लिए योग डायरी बनवाना उपयुक्त रहेगा।
7. मन्द-बुद्धि के बच्चों के लिए योग की विशेष कक्षाएँ ली जाएँ तथा उनके विकास का मूल्यांकन किया जाए।
8. योग पखवारा मनाया जाए जिसमें योग के बारे में विस्तार से बताएँ।
9. योग के अंतर्गत मौन दिवस का आयोजन किया जाए।
10. ॐ या कोई मन्त्र अधिकतम लिखने (लिखित जप के रूप में) के लिए प्रेरित किया जाए।
11. आने वाली महापुरुष की जयन्ती पर महापुरुष के सम्बन्ध में जीवन का वह हिस्सा लिखना

जिसमें योग का प्रभावी रूप आया हो।

12. अनेक विद्यालयों को मिलाकर इकाई बना सकते हैं और उनकी योग पर भाषण प्रतियोगिता रखी जा सकती है।
13. प्रायः बच्चों या बड़ों की बैठक में भी प्रारम्भ में ऊँकार और ध्यान का थोड़ा कार्यक्रम कराकर फिर अन्त में किसी भजन से समाप्त करना उपयोगी होगा।
14. कक्षा शिक्षण में बेला प्रारम्भ होने से पूर्व ध्यान या ऊँकार कराये तब शिक्षण प्रारम्भ करें, अधिक आनन्द आयेगा।
15. कक्षा में शिक्षण के पूर्व गत दिवस की अध्यापित विषय वस्तु को ध्यान की स्थिति में स्मरण करना तथा आने वाली विषय वस्तु से सहसम्बन्ध जोड़ने के लिए भी कहा जा सकता है।
16. विद्यालय के वार्षिकोत्सव में योगासन का अच्छा एवं प्रभावी प्रदर्शन रखा जायें यह ध्यान में रहें कि समग्र-योग के साथ समष्टीकरण किये बिना इसका योग-दृष्टि से कोई मूल्य न होगा। केवल प्रदर्शन वृत्ति को बढ़ावा मिलेगा।
17. प्रदर्शनी लगाई जाए – (विषय देकर)– सत्यम्, शिवम् या सुन्दरम् कार्य का आधार लिया जाए।
18. बालक के शरीरिक व मानसिक विकास में योग का क्या परिणाम रहा, यह अनुभव कर, उसे बताएँ।
19. मनोवैज्ञानिक आधार लेकर विद्यार्थी के आयु-वर्ग के अनुसार कुछ परीक्षण किया जाए फिर उस पर क्या क्रमिक परिवर्तित परिणाम आते हैं। इसका अध्ययन किया जाए।



अध्याय : दो

2.1 गुरुवन्दना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरुः साक्षात् परमब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

2.2 श्री सरस्वती वन्दना

या कुन्देन्दुतुषारहार धवला या शुभ्रवस्त्रावृत्ता

या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।

या ब्रह्मच्युतशंकर प्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता

सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥

जो कुन्दपुष्प, चन्द्रमा, बर्फ (तुषारहार) के समान धवल (श्वेत) हैं, जो शुभ्र (श्वेत) वस्त्र धारण करती हैं, जिनके हाथ उत्तम वीणा से सुशोभित हैं, जो श्वेतकमलासन पर विराजमान हैं, ब्रह्म, विष्णु, महेश आदि देवों के द्वारा जिनकी वंदना की जाती है, सब प्रकार की जड़ता को दूर करने वाली ऐसी भगवती सरस्वती मेरा पालन करें, मेरी रक्षा करें।

2.3 प्रार्थना-1

वह शक्ति हम दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जावें।

पर सेवा पर उपकार में हम, निज जीवन सफल बना जावें ॥

हम दीन दुःखी निबलों विकलों के, सेवक बन सन्ताप हरे।

जो हैं अटके भूले भटके, उनको तारे खुद तर जावे ॥ वह शक्ति हमें दो

छल दम्भ द्वेष पाखण्ड झूठ, अन्याय से निश दिन दूर रहें।

जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेमसुधा रस बरसावें ।। वह शक्ति हमें दो

निज आन—मान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे।

जिस देश—जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जावें।। वह शक्ति हमें दो

प्रार्थना-2

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।

अमर आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।

अखिल विश्व का जो परम आत्मा है।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।। 1 ।। शिवोऽहम्

अमर आत्मा है मरणशील काया।

सभी प्राणियोंके जो भीतर समाया।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 2 ।। शिवोऽहम्

जिसे शस्त्र काटे न अग्नि जलावे।

बुझावे न पानी न मृत्यु मिटावे।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 3 ।। शिवोऽहम्

है तारों सितारों में आलोक जिसका।

है चन्दा व सूरज में आभास जिसका।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 4 ।। शिवोऽहम्

जो व्यापक है, कण कण में है वास जिसका ।

नहीं तीनों कालों में हो नाश जिसका ।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ॥ 5 ॥ शिवोऽहम्

अजर और अमर जिसको वेदों ने गाया ।

वही ज्ञान अर्जुन को हरि ने सुनाया ।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ॥ 6 ॥

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् ॥

पाठ्यक्रम के अन्त में तीन बार ओ३म् का सस्वर उच्चारण करते हुए भ्रामरी प्राणायाम करें ।

2.4 गायत्री मंत्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं ।

भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

(यजु.३६ / ३) (ऋ-३६२ / १०)

भावार्थ : उस प्राणस्वरूप, दुखनाशक, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

2.5 शान्ति पाठ

ओ३म् असतो मा सद्गमय,

तमसो मा ज्योतिर्गमय,

मृत्योर्मा अमृतं गमय,

सर्वेषां शान्तिर्भवतु,
सर्वेषां पूर्णं भवतु,
सर्वेषां मंगलं भवतु,
स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्ता, न्यायेन मार्गेण मही महीशा ।
गो ब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनीं भवन्तु ॥

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग भवेत् ॥

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं ५ शान्तिः ।
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः ।
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सा मा शान्तिरेधि ॥ ओ३म् शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः ॥ (अजुर्वेद ३६/१७)

नाऽहं कर्ता हरि कर्ता
हरि कर्ता हि केवलम्
नाऽहं कर्ता गुरु कर्ता
गुरु कर्ता हि केवलम्
त्वमेव माता च पिता त्वमेव ।
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ॥
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव ।
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

योग क्या है :-

(भवतापेन तप्तानाम् योगो हि परमौषधम्)

योगासन

योग शब्द 'युज्' धातु से बना, जिसका अर्थ होता है जोड़ना। जीवात्मा का परमात्मासे मिल जाना, एक हो जाना ही योग है।

योगाचार्य महर्षि पतञ्जली ने सम्पूर्ण योग के रहस्य को अपने योगदर्शन में सूत्रों के रूप में उपदेश किया है।

चित्त को एक जगह स्थापित करना 'योग' है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः

याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है —

अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम्

जिस योग साधन द्वारा आत्मदर्शन या ब्रह्मसाक्षात्कार हो वही परमधर्म है।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में श्री कृष्ण ने कहा है — "योगः कर्मसु कौशलम्"

प्रत्येक काम को कुशलता से सम्पन्न करना योग है।

कृष्ण ने गीता में यह भी कहा है — "समत्वं योग उच्यते"

समता की भावना ही श्रेष्ठ योग है।

2.6 योगासन हेतु सावधानियाँ

1. योगासन करने से पूर्व शौच, स्नान आदि से निवृत्त हो जाएँ।
2. प्रातःकाल योगासन करना अधिक लाभकारी है।
3. योगासन करने के तुरन्त बाद स्नान नहीं करना चाहिए। पसीना को पंखे से न सुखाएँ, शरीर का ताप सामान्य होने पर स्नान करें।
4. योगासन के आधा घंटा पश्चात् दूध, दलिया, फल या अंकुरित अनाज थोड़ी मात्रा में अवश्य लेना चाहिए।
5. आसन एकान्त तथा धूल, मिट्टी व धुआ रहित स्थान पर किया जाना चाहिए। घर की छत, पार्क, नदी के किनारे अथवा ऐसे खुले स्थान पर करना चाहिए जहाँ शुद्ध हवा आती जाती हो। अधिक ठंड में योगासन खुले कमरे में करें।
6. आसन करते समय शरीर पर वस्त्र कम से कम और ढीले होने चाहिए।
7. समतल भूमि पर गरम कंबल मोटी दरी बिछाकर ही आसन करें। खुली भूमि पर बिना कुछ बिछाकर आसन कभी न करें, जिससे शरीर में निर्मित होने वाला विद्युत प्रवाह नष्ट न हो जाए।
8. श्वास मुँह से न लेकर नाक से ही लेना चाहिए।
9. आसन करते समय शरीर के साथ जबरदस्ती न करें, अतः धैर्य पूर्वक आसन करें।
10. आसन के पूर्व थोड़ा ताजा जल पीना लाभदायक है। आक्सीजन और हाइड्रोजन में विभाजित होकर संधि स्थानों का मल निकालने में जल बहुत सहायक होता है।
11. आसन की स्थिति में श्वासप्रश्वास का विशेष ध्यान रखें।
12. आसन करते समय शरीर में जिस स्थान पर खिंचाव पड़ रहा हो, कष्ट होने लगे या पीड़ा का अनुभव हो तो उस अभ्यास को तुरन्त बंद कर देना चाहिए।
13. आसन जितने समय तक सरलता से कर सकें उतने समय तक ही करें।
14. आसन नियमित तथा एकाग्रचिन्त होकर प्रसन्न मुद्रा में करना चाहिए।
15. आसन में प्रतिस्पर्धा नहीं करना चाहिए।
16. रुग्णावस्था में कुशल योग शिक्षक की देख-रेख में विशेष आसन करना चाहिए।
17. भोजन के चार घंटे बाद ही आसन किया जा सकता है।

अध्याय : तीन

3.1 अष्टांग योग

योग के द्वारा विभिन्न दशाओं को पार करता हुआ व्यक्ति मन और आत्मशक्ति का विकास करता हुआ आत्मज्ञान को प्राप्त होता है।

हमारे ऋषि-मुनियों ने योग के द्वारा शरीर मन और प्राण की शुद्धि तथा परमात्मा की प्राप्ति के लिए आठ प्रकार के साधन बतलाए हैं, जिसे अष्टांग योग कहते हैं। ये हैं—

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

- 1. यम—** सामाजिक व्यवहार में आने वाले नियमों को यम कहते हैं। जैसे किसी को न सताना, यातना न देना, लोभ लालच न करना, चोरी, डकैती न करना अर्थात् कोई ऐसा कार्य न करना जिससे मानव समाज के किसी भी अंग का अहित होता है।
- 2. नियम—** इसका संबंध आपके अपने चरित्र से है। व्यक्तिगत चरित्र स्वच्छ और उत्तम होना चाहिये। जब आपका अपना चरित्र ठीक होगा तो आप समाज के एक श्रेष्ठ अंग बन जायेंगे। श्रेष्ठ समाज उत्तम व्यक्तियों से ही मिलकर बनता है।
- 3. आसन—** शरीर के विभिन्न अंगों के विकास के लिये जो यौगिक क्रियाएँ की जाती हैं। उन्हें आसन कहा जाता है।
- 4. प्राणायाम—** यूँ तो प्राण विज्ञान बहुत व्यापक विषय है, परन्तु इसके अनेक अंगों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —

प्राण + आयाम अर्थात् प्राणों का आयाम

1. प्राण वायु को सन्तुलित रूप से लेना।
 2. नियमित रूप से गहरी और लंबी साँस लेना।
 3. प्राण पर सदैव ध्यान रखना।
- 5. प्रत्याहार—** किसी भी वस्तु में लिप्त न होना यानी “पद्मपत्रमिवाम्भसा” “जल में जैसे कमल है रहता जग में वैसे रहना” पर वह जल में गीला नहीं होता उसी प्रकार रहना। संसार में आसक्ति अनासक्तभाव से रहना प्रत्याहार है।

6. **धारणा**— अपने मन को एकाग्र करना या एकाग्रचित होना ही धारणा है। यह बहुत बड़ी बात है और जीवन में सफलता की कुंजी है।
 7. **ध्यान**— प्रभु का चिन्तन करना और उसके स्मरण में चित को लगाना ध्यान कहलाता है।
 8. **समाधि**— समाधि लग जाने पर मनुष्य के अन्तर में स्वतः ही प्रकाश दिखने लगता है।
- लाभ**— इन आठों प्रक्रियाओं से मानसिक आध्यात्मिक और शरीरिक विकास होता है। और आपका शरीर स्वस्थ होगा। उसके विकार दूर होंगे आपका मन स्वच्छ होगा और आप एक आदर्श व्यक्ति कहलाएँगे।

1. यम

“अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः”

यम का अर्थ है व्रत—पंचव्रत :- जिसे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह कहते हैं।

1. **अहिंसा**— अहिंसा का अर्थ है, हिंसा न होना। मन वचन कर्म से किसी प्राणी को न सताना अहिंसा है।
2. **सत्य**— सत्य का एक अर्थ है — झूठ न बोलना।
जिस वार्तालाप और व्यवहार से सबका हित हो वह सत्य है।
3. **अस्तेय**— चोरी न करना। पराई वस्तु को उसके स्वामी से पूछे बिना न लेना अस्तेय है।
4. **ब्रह्मचर्य**— ब्रह्मचर्य का मूल अर्थ है इन्द्रिय संयम।
शरीर की शक्ति का रक्षण ब्रह्मचर्य है।
5. **अपरिग्रह**— अपरिग्रह का एक और नाम है असंग्रह अर्थात् संग्रह न करना। अनावश्यक वस्तुएँ द्रव्य आदि को एकत्र ना करना अपरिग्रह है।

2. नियम

शौचसंतोषतपःस्वध्यायईश्वरप्रणिधानानि नियमाः

i. शौच

शौच का अर्थ है पवित्र। शरीर और मन दोनों की पवित्रता से वास्तविक अर्थ पूरा होता है।

ii. सन्तोष

‘सम्’ उपसर्ग पूर्वक “तुष् प्रीतौ” धातु से संतोष शब्द बना है।

सन्तोष का अर्थ — प्रसन्नता, खुशी, आनन्द है, जैसे भी भली बुरी परिस्थिति सामने हो उसमें प्रसन्न रहना, संतोष है। अथवा शरीर से पूर्ण पुरुषार्थ द्वारा प्राप्त धन से अधिक की लालसा न करना, न्यूनाधिक की प्राप्ति पर शोक और हर्ष न करना।

iii. तप

भूख प्यास, शीत उष्ण, स्थान तथा आसन के कष्टों को सहन करना। तप का तात्पर्य ‘कष्ट सहन’ है।

iv. स्वाध्याय

आत्म ज्ञान की प्राप्ति के लिये नित्य नियम से पठन—पाठन स्वाध्याय कहा जाता है।

v. ईश्वर प्रणिधान

प्रणिधान माने हैं — धारण करना, स्थापित करना। ईश्वर प्रणिधान अर्थात् ईश्वर को धारण करना, ईश्वर को स्थापित करना। अथवा जितने भी कर्म बुद्धि, वाणी और शरीर से किये जाते हैं, और छोटी से छोटी क्रियामात्र को परमगुरु भगवान् अथवा ईश्वर को अर्पण करते जाना तथा उन कर्मों के फलों को भी भगवान् को अर्पण कर देना, ईश्वर प्रणिधान है।

3. आसन

“स्थिरसुखमासनम्”

‘आसन’ शरीर की वह स्थिति है जिसमें आप अपने शरीर और मन के साथ शान्त स्थिर एवंसुख से रह सकें।

4. प्राणायामायाम

“तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोगतिविच्छेदः प्राणायामः।” (योगदर्शन २/४६)

अर्थात् आसन की स्थिरता होने पर श्वास—प्रश्वास की स्वाभाविक गति का नियमन करना—रोकर सम कर देना “प्राणायाम” है।

5. प्रत्याहार

“स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।”

अपने—अपने विषयों के संग से रहित होने पर इन्द्रियों का चित्त के रूप में अवस्थित हो जाना प्रत्याहार है।

6. धारणा

“दशबन्धः चित्तस्य धारणा”

चित्त को किसी एक विशेष में स्थिर करने का नाम धारणा है।

7. ध्यान

“तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।”

ध्यान धारण शक्ति का प्रसार है।

8. समाधि

“तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूप—शून्यमिव समाधिः।

केवल ध्येय मात्र की प्रतीति होती है चित्त का अपना स्वरूप शून्य हो जाता है वही (ध्यान ही) समाधि कहलाता है।

3.2 शरीर रचना

जीवधारी के शरीर की रचना पंच महाभूतों (आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी) से हुई है। इन पाँच तत्वों का प्रतिनिधित्व हमारे शरीर की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ करती हैं। अकाश का गुण है शब्द, और शब्द हम कान से सुनते हैं। वायु का गुण है स्पर्श, स्पर्श हम त्वचा से करते हैं। अग्नि का गुण

है प्रकाश, प्रकाश हम आँखों से देखते हैं। जल का गुण है स्वाद, स्वाद का अनुभव हमें जिह्वा से होता है। पृथ्वी का गुण है गंध, गंध का ज्ञान हमें नासिका से होता है। इसके अलावा पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं — (मुख, हाथ, पांव, लिंग और गुदा)

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच कर्मेन्द्रियाँ शरीर के संस्थान ग्रंथियाँ आदि 24 तत्वों से हमारे शरीर का संचालन होता है। इन सब पर शासन करने वाला है मन। मन पर शासन करने वाली बुद्धि। बुद्धि का शासक अहंकार और उसका स्वामी है जीवात्मा।

शरीर में सब संस्थानों का एक अपना मुख्य कार्य है जो उन अंगों को स्वस्थ रखने में सहायक होते हैं।

- | | | |
|------------------------------|---|---|
| 1. अस्थि संस्थान | — | हड्डियाँ |
| 2. संधि-संस्थान | — | संधियाँ |
| 3. मांस संस्थान | — | मांसपेशियाँ |
| 4. रक्त और रक्त वाहक संस्थान | — | जैसे हृदय, धमनी और शिरा |
| 5. श्वासोच्छ्वास संस्थान | — | जिनसे हम साँस लेते हैं जैसे नासिका, टेंटुआ (गर्दन) फुफ्फुस आदि। |
| 6. पोषण संस्थान | — | मुख, दाँत, मेदा, (आमाशय)छोटी बड़ी आँते, यकृत। |
| 7. मूत्र वाहक संस्थान | — | गुर्दा, मूत्राशय आदि। |
| 8. वात या नाड़ी संस्थान | — | मस्तिष्क, नाड़ियाँ, बात सूत्र आदि। |
| 9. विशेष ज्ञानेन्द्रियाँ | — | चक्षु, कान, त्वचा, नासिका, और जिह्वा। |
| 10. उत्पादक संस्थान | — | अंड, शिशन, योनि, गर्भाशय आदि। |

इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार की ग्रंथियाँ हैं जो हमारे शरीर में कार्य करती हैं।

योगासनों का प्रभाव रीढ़, मांस पेशियों, रक्त संस्थान, नाड़ी संस्थान तथा पाचन यंत्रों पर पड़ता है। हृदय, फेफड़े तथा मस्तिष्क से इनका घनिष्ठ संबंध है इसलिए इन सब अंगों के कार्यों एवं रचना की संक्षिप्त व्याख्या, योगशिक्षा के भाग 2 में दी जा रही है।

मेरुदण्ड (रीढ़) — गर्दन, पीठ और कमर के बीच में रीढ़ होती हैं। इसे 26 भाग होते हैं। जो आपस में बंधे रहते हैं। हमारे शरीर के स्वास्थ्य और यौवन का संबंध इसी रीढ़ के स्वस्थ होने से है। रीढ़ में जितनी लचक रहेगी ये 26 मोहरें

साफ रहेंगे, इनके मुड़ने-तुड़ने में रुकावट नहीं होगी और हमारा स्वास्थ्य और यौवन भी बना रहेगा इन 26 अस्थियों में से 7 गर्दन में, 12 पीठ में, 5 कमर में और शेष दो कमर के नीचे गुदाके पास होती है जो नौ के जोड़ से दो बनती है। इन्हीं के मध्य से सिर के पिछले भाग से सुषुम्ना नाड़ी निकल कर गुदाद्वार के पास तक आती है। जो सारे शरीर का नियंत्रण करती है।

मांसपेशियाँ – अस्थि पिंजर के भीतर शरीर के कार्य को चलाने के लिये कोमल अंग होते हैं। जो सौत्रिक तन्तुओं द्वारा इन अस्थियों से जुड़े रहते हैं। अस्थियों को ढकने तथा ग्रंथियों और अन्य कोमल अंगों की रक्षा के लिये मांसपेशियाँ होती हैं। जिनसे शरीर सुडौल बनता है। मांस का यह विशेष गुण है कि यह सिकुड़ कर मोटा और छोटा हो जाता है फिर अपनी पूर्व दशा को प्राप्त कर लेता है। मांस की सिकुड़ने को “संकुचन” और फैलने को “प्रसार” कहते हैं।

गतियाँ – हमारे शरीर में दो प्रकार की गतियाँ होती हैं। एक वे जो हमारी इच्छानुसार होती हैं जैसे – चलना, फिरना, बोलना, हाथ उठाना, भोजन चबाना आदि। क्योंकि ये गतियाँ इच्छा के आधीन होती हैं इस लिये इन्हें ऐच्छिक गति कहते हैं।

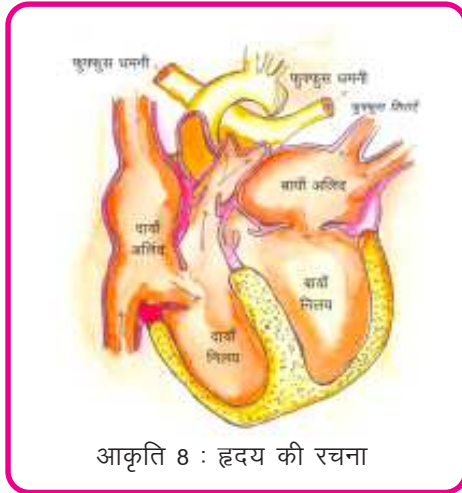
दूसरी गतियाँ वे हैं जो हमारे बस में नहीं हैं हम उनको अपनी इच्छा से रोक नहीं सकते और जो रुके उन्हें चला नहीं सकते उन्हें अनैच्छिक गतियाँ कहते हैं जैसे हृदय की धड़कन आंत्रगति, आंखों पर प्रकाशीय प्रभाववश गति आदि।

3.3 रक्त संस्थान फुफ्फुस और हृदय

हृदय

मनुष्य का हृदय उसकी बंद मुठ्ठी से बहुत कुछ मिलता जुलता है और वह छाती में बाईं तरफ फेफड़ों के बीच में स्थित है जिसे अक्सर तेज दौड़कर आने के बाद तथा घबराहट के समय तेज से धड़कता हुआ अनुभव किया जा सकता है। सारे शरीर को हृदय से रक्त देने तथा उसे वापस हृदय में लाने के लिये दो प्रकार की नलियाँ होती हैं जो सारे शरीर में फैली रहती हैं इनमें से कई तो बाल से भी बारीक होती हैं रक्त को ले जाने वाली ये नलियाँ “धमनियाँ” कहलाती हैं जबकि अशुद्ध रक्त को हृदय में वापस लाने वाली नलियाँ “शिराएँ”

हृदय की दाईं ओर दायाँ, और बाईं ओर बायाँ फेफड़ा है। हृदय एक थैली के समान आवरण से ढका रहता है। जिसे “हृदय कोश” कहते हैं। हृदय मांस से निर्मित एक कोष्ठ है, जिसके भीतर रक्त भरा रहता है। यह भीतर से दो भागों में विभक्त रहता है। इन दोनों का आपस में कोई सम्बन्ध नहीं होता है प्रत्येक द्वार सौत्रिक तन्तु से निर्मित है। और वे नीचे तरफ को ही खुलते हैं।



इसलिए रक्त ऊपर के भाग से नीचे की ओर आ तो सकता है लेकिन ऊपर की ओर जा नहीं सकता इस प्रकार हृदय में चार भाग होते हैं। हृदय कभी एक सा नहीं रहता। वह कभी सिकुड़ता है तो कभी फैलता है। सिकुड़ने और फैलने से उसकी धारणा शक्ति घटती बढ़ती रहती है। फुफुस रक्त को शुद्ध करने वाला अंग है इन अंगों में सम्पूर्ण दायाँ भाग अशुद्ध तथा बायाँ भाग शुद्ध रक्त का लेनदेन करता है। हृदय के कोष्ठ रक्त को आगे की ओर धकेल कर फैलने लगते हैं। और शीघ्र ही पूर्ण दशा को प्राप्त होते हैं। यह कार्य एक मिनट में 70 से 75 बार होता है। जिसे हम नाड़ी स्पन्दन भी कहते हैं। छोटे बच्चों में हृदय की घड़कन तेज और बुढ़ापा आने पर यह मन्द पड़ जाती है।

हृदय एक बार में 60 से 80 ग्राम रक्त पम्प करता है। हृदय एक मिनट में 5 से 8 लीटर के लगभग रक्त शरीर को भेजता है यह क्रम जीवन पर्यन्त चलता रहता है।

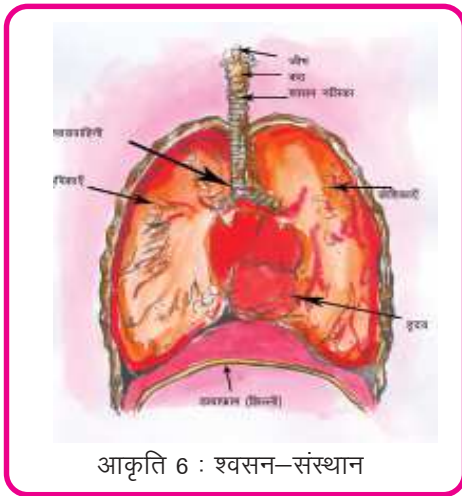
3.4 श्वासक्रम

वायु का नासिका द्वारा फेफड़ों में जाना और बाहर निकलना “श्वासक्रम” कहलाता है। श्वास सदा नाक से ही लेना चाहिये मुख से नहीं। नासिका में इस प्रकार के यंत्र हैं, जो श्वास को पहले छान कर गरम करते हैं। फिर उसे फेफड़ों में भेजते हैं। इस प्रकार कोई भी विकार नासिका द्वारा फेफड़ों में नहीं पहुँच सकता जबकि मुख में इस प्रकार के यंत्र नहीं हैं।

साधारण स्वस्थ मनुष्य एक मिनट में 13 से 20 बार तक श्वास लेता है। बचपन में यह संख्या अधिक होती है। शारीरिक परिश्रम से जैसे— व्यायाम, भागना, दौड़ना, खेलकूद आदि में यह संख्या अधिक हो जाती है। खड़े रहने में और दिन के समय में साँस जल्दी—जल्दी चलती है।

मस्तिष्क

योगासन एवं प्राणायाम की पूरी व्यवस्था मस्तिष्क तथा नाड़ी मंडल को स्वस्थ व शान्त करने की है। ताकि मस्तिष्क शरीर के अंगों को चला सके और उन पर नियंत्रण रख सके। मस्तिष्क दो भागों में बटा हुआ है। “वृहद् मस्तिष्क” और “लघु मस्तिष्क”।



आकृति 6 : श्वसन-संस्थान



आकृति 7 : कूपिकाएँ और केशिकाएँ

मस्तिष्क सारे शरीर के कार्य को नाड़ी सूत्रों द्वारा चलाता है। ये नाड़ी सूत्र डोरी के समान परत होते हैं। सभी नाड़ियाँ एक समान नहीं होती हैं।

ये नाड़ियाँ मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं जैसे कि वे नाड़ियाँ जिनका पेशियों की गति से सम्बन्ध होता है। “चालक नाड़ियाँ” कहलाती हैं। और वे नाड़ियाँ जिनका चेतना या संवेदन से सम्बन्ध है, संवेदनिक नाड़ियाँ कहलाती हैं। लेकिन कुछ नाड़ियाँ मिश्रित रहती हैं।

सुषुम्ना की रचना

योग में सुषुम्ना का बड़ा नाम आता है। चक्रों का होना भी इसी पर माना गया है। इन चक्रों के खुलने से व्यक्ति पूरी तरह तनाव मुक्त निरोगी व विश्राम की स्थिति में रहता है। सुषुम्ना नाड़ी मंडल का वह भाग है जो कपाल के महाछिद्र से प्रारम्भ होकर रीढ़ में से उसके आखिरी मोहरे से ऊपर वाले मोहरे तक आता है। सुषुम्ना कुछ बेलनाकार और रस्सी की सी होती है। इसका पिछला भाग मध्य रेखा में दबा रहता है। इन नाड़ियों के बाएँ भाग को “इडानाड़ी” मंडल तथा दाएँ भाग को “पिंगला नाड़ी” मंडल कहते हैं। इनका सीधा संबंध नासिका की इडा (चन्द्र नाड़ी) पिंगला (सूर्य नाड़ी) से होता है।

पाचन तंत्र

शरीर में अनेक क्रियाएँ चलती रहती हैं। जिसके लिये ऊर्जा की आवश्यकता होती है। तथा क्रियाओं के संचालन में कई कोशिकाएँ या ऊतक टूट-फूट जाते हैं। अतः इनके निर्माण व ऊर्जा की पूर्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है।

आहार के निम्न घटक होते हैं।

1. कार्बोहाइड्रेट
2. प्रोटीन
3. वसा
4. विटामिन
5. लवण
6. पानी

हम इन घटकों को भोजन के रूप में करते हैं। उसे उसी रूप में अवशोषित नहीं किया जाता है। अतः भोजन को पाचन की आवश्यकता होती है।

पाचन — जटिल यौगिक को सरल यौगिक में बदलनेकी क्रिया पाचन कहलाता है। हमारे शरीर में भोजन के लिये 10 मी. लम्बी एक माँसल नलिका होती है। जिसे आहार नाल कहते हैं। इसके निम्न भाग होते हैं।

मुह ग्रसिका — ग्रास नलिका आमाशय, ग्रहणी, छोटी आंत, बड़ी आंत मलद्वार

मुँह — यह पाचन प्रणाली का मुख्य द्वार है इसमें एक प्रकार का रस स्रवित होता है जो मुँह को हमेशा तर रखता है मुँह में भोजन को चबाने की क्रिया सम्पन्न होती है।

ग्रसनी— मुख गुहा के पीछे का कीप की तरह का भाग होता है। यह 5 से.मी. लम्बी होती है। यह ग्रसनी के बाद 26 से.मी. लम्बी नली होती है। जो ग्रीवा से होती हुई कशेरुका तक स्थित है।

आमाशय— ग्रास नलिका का अंतिम भाग एक फूली हुई थैली में खुलता है। जिसे अमाशय कहते हैं। यह आहारनाल की सबसे बड़ी गुहा है यहां भोजन का पाचन होता है। यह 26 से. मी. लम्बा तथा चौड़ाई 10 से. मी. होता है।

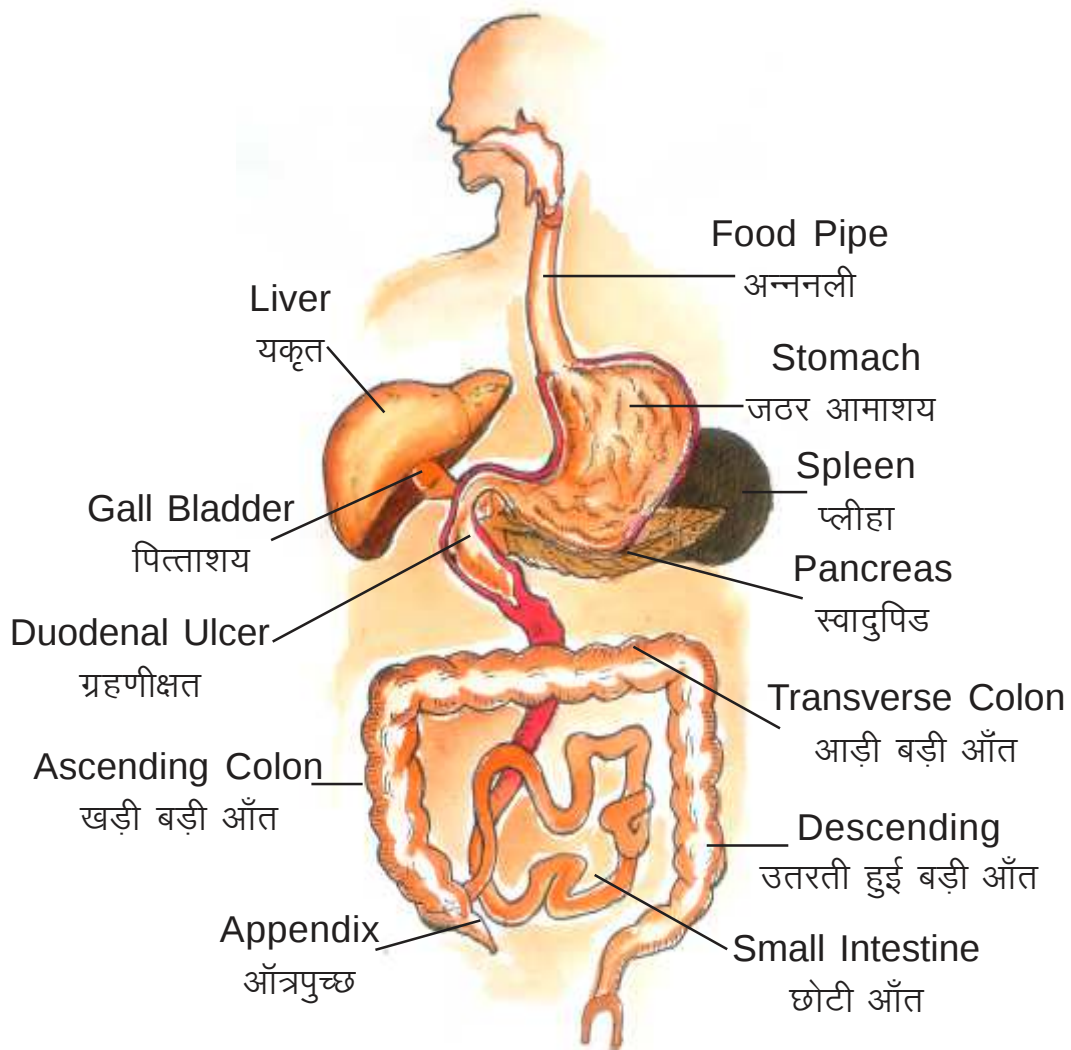
ग्रहणी— यह आमाशय के दूसरे छोर से शुरू होता है। यह 52 से.मी. लम्बा अर्ध चंद्राकार होता है।

छोटी आँत — यह $6\frac{1}{2}$ मी. लम्बी 2 से.मी. चौड़ी नलिका होती है। इसकी लम्बी नलिका उदर

में कुण्डली के समान लिपटी रहती है।

- बड़ी आँत** — यह पाचन प्रणाली का अंतिम भाग होता है जो छोटी आँत को चारों ओर से घेरे रहती है। इसकी लम्बाई 2 मी. तथा चौड़ाई 7से.मी. होती है। बड़ी आँत का अंतिम भाग घूमकर नीचे मलाशय में आता है।
- गुदाद्वार** — आहार नली का अंतिम छोर शरीर के बाहर की ओर एक द्वार के रूप में खुलता है। जिससे मल विसर्जित होता है। वह मलद्वार कहलाता है।

ग्रहणी क्षत (DUODENAL ULCER)



अध्याय : चार

4.1 आसन का तात्पर्य और प्रकार

आसन का तात्पर्य :- “ आसन शरीर की वह स्थिति है जिसमें आप अपने शरीर और मन को शान्त स्थिर एवं सुख से रख सकें।

“ स्थिरसुखमासनम् ”

सुख पूर्वक बिना कष्ट के एक ही स्थिति में अधिक से अधिक समय तक बैठने की क्षमता को आसन कहते हैं।

योग शास्त्रों में परम्परा के अनुसार चौरासी लाख आसन हैं ये जीव जन्तु के नामों पर आधारित है। इन आसनों के बारे में कोई नहीं जानता इसलिए चौरासी आसनों को ही प्रमुख माना गया है। और अब कालान्तर में बत्तीस आसन ही प्रसिद्ध हैं।

आसनों को अभ्यास शारीरिक, मानसिक एवं अध्यात्मिक रूप से स्वास्थ्य लाभ एवं उपचार के लिए किया जाता है।

आसनों को दो समूहों में बाँटा गया है:-

1. गतिशील आसन

2. स्थिर आसन

1. गतिशील आसन:- वे आसन जिनमें शरीर शक्ति के साथ गतिशील रहता है।

2. स्थिर आसन :- वे आसन जिनमें अभ्यास को शरीर में बहुत ही कम या बिना गति के किया जाता है।

आसनों को विभिन्न रूपों में बाँटा गया है। जैसे प्रारंभिक समूह के आसन “ वायु निरोधक अभ्यास ” शक्ति बंध के आसन, बैठकर, खड़े होकर, झुककर, मुड़कर, लेटकर, ध्यान के आसनों के रूप में किये जाते हैं।

“आसनानि समस्तानि यावन्तो जीवजन्तवः।

चतुरशीतिलक्षाणि शिवेन कथितं पुरा ॥

तेषां मध्ये विशिष्टानि षोडशेन शतं कृतम्
तेषां मध्ये मर्त्यलोके द्वात्रिंशदासनं शुभम्

4.2 स्वस्तिकासन

स्थिति – स्वच्छ कम्बल या वस्त्र पर पैर फैलाकर बैठें।

विधि– बाएँ पैर को घुटने से मोड़कर दाहिनी जंघा और पिंडली के बीच इस प्रकार स्थापित करें कि बाएँ पैर का तल छिप जाए तत्पश्चात् दाहिने पैर के पंजे और तल को बाएँ पैर के नीचे से जांघ और पिंडली के मध्य स्थापित करने से स्वस्तिक आसन बन जाता है। ध्यान मुद्रा में बैठें तथा रीढ़ सीधी कर श्वास खींचकर यथाशक्ति रोकें। इस क्रिया को पैर बदलकर भी करें।



चित्र क्र. 4.1

- लाभ–**
1. पैरो का दर्द, पसीना आना, दूर होता है।
 2. पैरों का गर्म या ठण्डापन दूर होता है। ध्यान हेतु श्रेष्ठ आसन है।

4.3 भद्रासन

- विधि–**
1. वज्रासन में बैठ जाइए।
 2. घुटनों को जितना सम्भव हो सके, दूर-दूर कर लीजिए।
 3. पैरों की अंगुलियों का संपर्क जमीन से बना रहें।
 4. अब पंजों को इतना अलग करिए कि उनके बीच में नितम्ब फर्श पर जम जाएँ।
 5. बिना किसी तनाव के घुटनों का फासला और बढ़ाइए। हाथों को



चित्र क्र. 4.2

घुटनों पर रखिए हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

6. जब शरीर सुख की स्थिति में हो तब (नासिकाग्र दृष्टि) दृष्टि और मन को नाक के अग्र भाग पर स्थिर कीजिए।

लाभ— मूलाधार चक्र क्रियाशील होता है।

4.4 गोमुखासन

विधि—

1. दोनों पैर सामने फैलाकर बैठें। बाएँ पैर को मोड़कर एड़ी को दाएँ नितम्ब के पास रखें।
2. दाएँ पैर को मोड़कर बाएँ पैर के ऊपर इस प्रकार रखें कि दोनों घुटने एक दूसरे के ऊपर हो जाएँ।
3. दाएँ हाथ को ऊपर उठाकर पीठ की ओर मोड़िए तथा बाएँ हाथ को पीठ के पीछे नीचे से लाकर दाएँ हाथ को पकड़िए। गर्दन व कमर सीधी रहे।
4. एक ओर से लगभग एक मिनट तक करने के पश्चात् दूसरी ओर से इसी प्रकार करें।



चित्र क्र. 4.3

टीप—

जिस ओर का पैर ऊपर रखा जाए उसी ओर का (दायाँ/बायाँ) हाथ ऊपर रखें।

लाभ—

1. अण्डकोषवृद्धि एवं आन्त्रवृद्धि में विशेष लाभप्रद है।
2. धातु रोग, बहुमूत्र एवं स्त्री रोगों में लाभकारी है।
3. यकृत, गुर्दे एवं वक्षस्थल को बल देता है। संधिवात, गठिया को दूर करता है।

4.5 गोरक्षासन

विधि—

1. दोनों पैरों की एड़ी तथा पंजे आपस में मिलाकर सामने रखिए।
2. अब सीवनी नाड़ी (गुदा एवं मूत्रेन्द्रिय के मध्य) को एड़ियों पर रखते हुये उस पर बैठ जाइए। दोनों घुटने भूमि पर टिके हुए हों। हाथों को ज्ञानमुद्रा की स्थिति में घुटनों पर रखें।



चित्र क्र. 4.4

लाभ—

1. मांस पेशियों में रक्त संचार ठीक रूप से होकर वे स्वस्थ होती है।
2. मूलबंध को स्वाभाविक रूप से लगाने और ब्रह्मचर्य कायम रखने में यह आसन सहायक है। इंद्रियों की चंचलता समाप्त कर मन में शान्ति प्रदान करता है। इसलिए इसका नाम गोरक्षासन है।

4.6 अर्द्धमत्स्येन्द्रासन

विधि—

1. दोनों पैर सामने फैलाकर बैठें। बाएँ पैर को मोड़कर एड़ी को नितम्ब के पास लगाएँ।
2. बाएँ पैर को दाएँ पैर के घुटने के पास बाहर की ओर भूमि पर रखें।
3. बाएँ हाथ को दाएँ घुटने के समीप बाहर की ओर सीधा रखते हुये दाएँ पैर के पंजे को पकड़ें।
4. दाएँ हाथ को पीठ के पीछे से घुमाकर पीछे की ओर देखें।
5. इसी प्रकार दूसरी ओर से इस आसन को करें।



चित्र क्र. 4.5

लाभ—

1. मधुमेह एवं कमर दर्द में लाभकारी है।
2. पृष्ठ देश की सभी नस-नाड़ियों में (जो मेरुदण्ड के इर्द-गिर्द फैली हुई है) रक्त संचार को सुचारु रूप से चलाता है।
3. उदर विकारों को दूर कर आँखों को बल प्रदान करता है।

4.7 योगमुद्रासन

स्थिति— भूमि पर पैर सामने फैलाकर बैठ जाइए।

- विधि—**
1. बाएँ पैर को उठाकर दाईं जांघ पर इस प्रकार लाइए कि बाएँ पैर की एड़ी नाभि के नीचे आए।
 2. दाएँ पैर को उठाकर इस तरह लाइए कि बाएँ पैर की एड़ी के साथ नाभि के नीचे मिल जाए।



3. दोनों हाथ पीछे ले जाकर बाएँ हाथ की कलाई को दाहिने हाथ से पकड़े। फिर श्वास छोड़ते हुए सामने की ओर झुकते हुए नाक को जमीन से लगाने का प्रयास करें। हाथ बदलकर किया करें। पुनः पैर बदलकर पुनरावृत्ति करें।

लाभ— चेहरा सुंदर, स्वभाव विनम्र व मन एकाग्र होता है।

4.8 उदराकर्षण या शंखासन

स्थिति— काग आसन में बैठ जाइए।

- विधि—**
1. हाथों को घुटनों पर रखते हुये पंजों के बल उकड़ू (कागासन) बैठ जाइए। पैरों में लगभग एक सवाफुट का अन्तर होना चाहिए।
 2. श्वास अन्दर भरते हुये दाएँ घुटने को बाएँ पैर के पंजे के पास टिकाइए तथा बाएँ घुटने को दाईं तरफ झुकाइए। गर्दन को बाईं ओर से पीछे की ओर घुमाइएँ व पीछे देखिए। थोड़े समय रुकने के पश्चात् श्वास छोड़ते हुए बीच में आ



चित्र क्र. 4.7

जाइए। इसी प्रकार दूसरी ओर से करें।

लाभ—

1. यह शंखप्रक्षालन की एक क्रिया है।
2. सभी प्रकार के उदर रोग यथा कब्ज, मन्दाग्नि, गैस, अम्लपित्त, खट्टी-खट्टी डकारें का आना एवं बवासीर आदि निश्चित रूप से दूर होते हैं।
3. आँत, गुर्दे, अग्नाशय तथा तिल्ली संबंधी सभी रोगों में लाभप्रद है।

4.9 आकर्ण धनुरासन

विधि—

1. दाहिने पैर को मोड़कर बाएँ पैर पर रखिए।
2. बाएँ हाथ से दाहिने पैर का अंगूठा तथा दाएँ हाथ से बाएँ पैर का अंगूठा पकड़िए।
3. श्वास अन्दर भर कर दाएँ पैर को बाएँ कान के पास लाइए। कुछ समय इस स्थिति में रुक कर पुनः दण्डासन की स्थिति में आ जाइए इसी तरह दूसरे पैर से करें।



चित्र क्र. 4.8

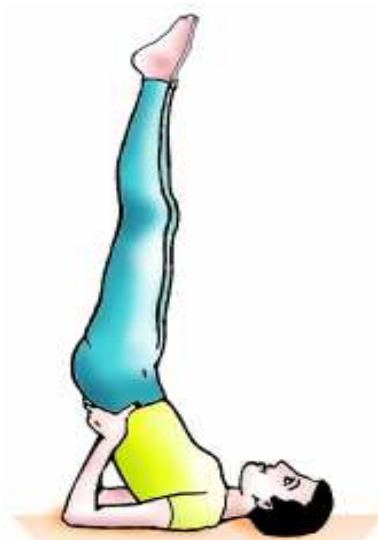
4.10 विपरीतकरणी आसन

यह आसन सर्वांगासन की भांति ही है। यह सर्वांगासन से सरल है। अतः प्रारंभिक अवस्था में इसका अभ्यास करना चाहिये।

जिनकी गर्दन की मांसपेशियाँ कठोर हैं तथा जो धड़ को सीधा नहीं कर सकते, उन्हें इस आसन का अभ्यास करना चाहिये।

विधि—

1. पीठ के बल सीधे लेट जाइए।
2. दोनों हाथ जमीन पर बाजू में तथा हथेलियाँ नीचे की ओर खुली रहें।
3. हाथों का सहारा देकर दोनों पैरों को



चित्र क्र. 4.9

धीरे-धीरे ऊपर उठाइए।

4. हाथों को कोहनियों से मोड़िए तथा हथेलियों से दबाव डालकर पीठ को 45 अंश के कोण पर ही रखें।
5. टुड्डी का स्पर्श छाती से नहीं किया जाता है।

लाभ—

1. जठराग्नि तेज होती है।
2. भूख लगती है, शरीर स्वस्थ रहता है।
3. चेहरा तेजस्वी रहता है बाल जल्दी सफेद नहीं होते हैं।
4. दिमागी ताकत बढ़ती है।
5. पैरों की सूजन, हाथी पांव की प्रारंभिक सूजन ठीक हो जाता है।
6. कण्ठमाला, फोड़े, मुँहासे, खाज आदि रक्त विकार तथा अन्य रोगों से मुक्ति मिलती है।

4.11 सर्वागासन

स्थिति — दरी या कम्बल बिछाकर पीठ के बल लेट जाएँ।

विधि— दोनों पैरों को धीरे-धीरे उठाकर 90 अंश तक लाएँ बाहों और कोहनियों की सहायता से शरीर के निचले भाग को इतना ऊपर ले जाएँ कि वह कंधों पर सीधा खड़ा हो जाए पीठ को हाथों का सहारा दें हाथों के सहारे से पीठ को दबाएँ कण्ठ से टुड्डी लगाकर यथाशक्ति रखें। फिर धीरे-धीरे पूर्व अवस्था में पहले पीठ को जमीन से टिकाएँ फिर पैरों को भी धीरे-धीरे सीधा करें।

लाभ—

1. थायराइड को सक्रिय एवं स्वस्थ बनाता है।
2. मोटापा, दुर्बलता, कद वृद्धि की कमी एवं थकानादि विकार दूर होते हैं।
3. एड्रिनल, शुक्र ग्रन्थि एवं डिम्ब ग्रन्थियों को सबल बनाता है।



चित्र क्र. 4.10